LLB 3 year 3rd semester

The Law of Evidence

Syllabus unit - 2nd

General principles concerning admission and confession
Distinction between admission and confession
Problems of non-
admissibility of confession caused by any inducement threat or promise
Inadmissibility e of confession made before a police officer
Admissibility of custodial confessions
Dying declaration the justification for relevance on dying declaration
Appreciation of evidentiary value of dying declaration

Pankaj Katiyar
(Assistant professor)
Awadh Law College
Barabanki

Admission-

Meaning and definition-.

The expression admission means voluntary acknowledgement of the existence or truth of a particular fact. But in the evidence act the term admission has not been used in this wider sense.
It deals with admissions by statements only oral or written or contained in in electronic form. Admission plays a very important role in judicial proceedings. If one party to the suit or any other proceeding proves that the other party has admitted his case the work of court becomes easie An admission must be clear precise not vague or ambiguous.

धारा 17 में स्वीकृति को परिभाषित किया गया है इसके अनुसार स्वीकृति एक मौखिक व दस्तावेजी कथन है जोकि किसी भी वाद के सुसंगत तथ्य के बारे में कोई अनुमान इंगित करता है उक्त कथन किन व्यक्तियों द्वारा और इन परिस्थितियों में किया गया हो कि स्वीकृत की कोटि में आ सके इस बारे में धारा 17 कुछ नहीं कहती है यह धारा केवल धारा 18 से 20 की ओर इंगित करती है अर्थात यह की उपर्युक्त कथन तभी स्वीकृति का रूप ले सकते हैं जब वह उन विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा और उन विशिष्ट परिस्थितियों में किया गया वह जो 18 से 20 तक की धाराओं में वर्णित है।

धारा 17 स्वीकृति की परिभाषा--

स्वीकृति वह मौखिक या दस्तावेज ई या इलेक्ट्रॉनिक रूप में अंतर बिष्ट कथन है जो किसी भी विवाधक तथ्य या सुसंगत तथ्य के बारे में कोई अनुमान इंगित करता है और जो ऐसे व्यक्तियों में से किसी के द्वारा और ऐसी परिस्थितियों में किया गया है जो एतस्मिनपश्चात वर्णित है।
अर्थात कोई कथन स्वीकृत की कोटि में तभी आ सकेगा जब वह-

1 मौखिक या दस्तावेजी कथन हो

2-वह किसी विवाधक या सुसंगत तथ्य के विषय में कोई अनुमान इंगित करता हो

3-वह किसी ऐसे व्यक्ति के द्वारा किया गया हो जिसका वर्णन धारा 18 से 20 तक में किया गया है और

4-उक्त धाराओं में वर्णित किसी भी परिस्थिति में किया गया हो।

धारा 18- स्वीकृत कार्रवाई के पक्ष कार या उसके अभिकर्ता द्वारा-:

वे कथन स्वीकृतियां है जिन्हें कार्रवाई के किसी पक्षकार ने किया हो या ऐसे किसी पक्षकार के ऐसे किसी अभिकर्ता ने किया हो जिसे मामले की परिस्थितियों में न्यायालय उन कथनों को करने के लिए उस पक्ष कार द्वारा अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से प्राधिकृत किया हुआ मानता है।

प्रतिनिधि रूप से वादकर्ता द्वारा-:

वाद के ऐसे पक्षकारों द्वारा जो प्रतिनिधिक हैसियत में वाद ला रहे हो या जिन पर प्रतिनिधिक हैसियत में वाद लाया जा रहा हो किए गए कथन जब तक की वह उस समय न किए गए हो जबकि उनको करने वाला पक्षकार ऐसी हैसियत धारण करता था स्वीकृतियां नहीं है-

वे कथन स्वीकृतियां हैं जो-

1-विषयवस्तु में हितबद्ध पक्षकार द्वारा- ऐसे व्यक्तियों द्वारा किए गए हैं जिनका कार्यवाही की विषय वस्तु में कोई संपत्तिक या धन संबन्धी हित है और जो इस प्रकार हित बंद व्यक्तियों की हैसियत में वह कथन करते हैं अथवा

2-उस व्यक्ति द्वारा जिससे हित व्युत्पन्न हुआ हो- ऐसे व्यक्तियों द्वारा किए गए हैं जिनसे वाद के पक्षकारों का वाद की विषय वस्तु में अपना हित व्युत्पन हुआ है

यदि वे कथन उन्हें करने वाले व्यक्तियों के हित के चालू रहने के दौरान में किए गए हैं।

धारा 19-

उन व्यक्तियों द्वारा स्वीकृतियां जिनकी स्थिति वाद के पक्षकारों के विरुद्ध साबित की जानी चाहिए-वे कथन जो उन व्यक्तियों द्वारा किए गए हैं जिनकी वाद के किसी पक्ष कार के विरुद्ध स्थिति या दायित्व साबित करना आवश्यक है श्री कृतियां हैं यदि ऐसे कथन ऐसे व्यक्तियों द्वारा या उन पर लाए गए बाद में ऐसी स्थिति याद दायित्व के संबंध में ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध सुसंगत होते और यदि वे उस समय किए गए हो जबकि उन्हें करने वाला व्यक्ति ऐसी स्थिति ग्रहण किए हुए हैं या ऐसे दायित्व के अधीन है

दृष्टांत----

धारा 20 -

वाद के पक्ष कार द्वारा अभिव्यक्त रूप से निर्दिष्ट व्यक्तियों द्वारा स्वीकृतियां-

वे कथन जो उन व्यक्तियों द्वारा किए गए हैं जिनको वाद के किसी पक्ष कारने किसी विवाद ग्रस्त विषय के बारे में जानकारी के लिए अभिव्यक्त रूप से निर्दिष्ट किया है स्वीकृति या हैं।

दृष्टांत--
प्रश्न यह है कि क्या क द्वारा ख को बेचा हुआ घोड़ा अच्छा है?
ख से क कहता है कि जाकर ग से पूछ लो ग इस बारे में सब कुछ जानता है ग का कथन स्वीकृति है।

धारा 18 19 20 के सम्मिलित प्रभाव से यह स्पष्ट है कि निम्नलिखित व्यक्ति स्वीकृति कर सकते हैं-

1-वाद-कार्रवाई के पक्षकार

2-पक्षकारों के अभिकर्ता

3-ऐसे पक्ष कार जो प्रतिनिधि की हैसियत में हैं

4-ऐसे व्यक्ति जिन्हें धनीय या सांपत्तिक हित प्राप्त हो

5-पूर्वर्ती हक वाला व्यक्ति

6-ऐसे व्यक्ति जिनकी स्थिति विवादित या सुसंगत तथ्य है

7-ऐसे व्यक्ति जिनको पक्षकारों ने रेफरी बनाया है

स्वीकृतियों की ग्राहाता का कारण--

स्वीकृति को सुसंगत साक्ष्य के रूप में स्वीकार करने के निम्नलिखित कारण हैं-

1-स्वीकृति सबूत के अधित्यजन के रूप में

2-स्वीकृति अपने हित के विरुद्ध बयान के रूप में

3-स्वीकृति असंगत कथनों का साक्ष्य

4-स्वीकृत सत्य के साक्ष्य के रूप में

स्वीकृतियों के प्रकार-

स्वीकृतियां दो प्रकार की होती हैं

1-न्यायिक स्वीकृति

2-न्यायिकेतत्तर स्वीकृति

1-न्यायिक स्वीकृति वह है जो कि न्यायिक कार्यवाही के अनुक्रम में की जाती है इसको औपचारिक स्वीकृति भी कह सकते हैं।

2-ऐसी स्वीकृति या जो कि न्यायिक कार्यवाही के अनुक्रम में नहीं की जाती हैं वह न्यायिकेतत्तर स्वीकृतियां कहलाती हैं इनको अनौपचारिक स्वीकृतियां कह सकते हैं।

स्वीकृति का साक्ष्यिक मूल्य-

स्वीकृतियां यदि सही एवं स्पष्ट हो तो वह स्वीकृत तथ्यों का सबसे अच्छा सबूत होती हैं स्वीकृतियां हमेशा स्वीकृतिकर्ता के विरुद्ध प्रथम दृष्टया प्रभाव रखती हैं जब तक कि उनके बारे में अन्य कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण ना हो किसी पक्षकार की स्वीकृति जैसा की धारा 18 से 20 के अंतर्गत परिभाषित है तथा जो साक्ष्य अधिनियम की धारा 21 की अपेक्षाओं की पूर्ति करती है वह मौलिक साक्ष्य होती है स्वीकृति यदि स्पष्ट हो तो वह स्वीकृत करने वाले के विरुद्ध सर्वोच्च साक्ष्य होती है यद्यपि निश्चायक नहीं होती स्वीकृति, स्वीकृति को गलत सिद्ध करने का भार स्वीकृति करने वाले पर डाल देती है इस सिद्धांत पर कि जब किसी तथ्य को कोई पक्षकार स्वयं सत्य होना स्वीकार करता है तो

उसके बारे में यह उपधारणा की जा सकती है कि वह सत्य है जब तक कि इस उपधारणा का खंडन नहीं किया जाता है स्वीकृत तथ्य को साबित किया हुआ समझा जाना चाहिए।

कौन स्वीकृति साबित कर सकता है?

धारा 21 स्वीकृतियों का उन्हें करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध तथा उनके द्वारा या उनकी ओर से साबित किया जाना-

यह धारा इस सिद्धांत पर आधारित है की स्वीकृति स्वीकार करता के प्रति साक्ष्य होती है और इसलिए उसी के खिलाफ साबित की जा सकती है वह स्वयं अपने कथन साबित नहीं कर सकता वरन प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जो कठिनाई का शिकार हो या कठिनाई की संभावना रखता हो वह ऐसे कथन करता रहता जो उसके हित में प्रयोग हो सकते थे।

अर्थात स्वीकृति या उन्हें करने वाले व्यक्तियों के या उसके हित प्रतिनिधि के विरुद्ध सुसंगत हैं और साबित की जा सकेंगी किंतु उन्हें करने वाले व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से या उसके हित प्रतिनिधि द्वारा निम्नलिखित अवस्थाओं के सिवाय उन्हें साबित नहीं किया जा सकेगा-

1-मृत्युकालिक कथन या जो कथन धारा 32 के अंतर्गत सुसंगत हों

2-मन या शरीर की दशा

3-जब किसी अन्य सिद्धांत के अंतर्गत सुसंगत तथ्य हो

दृष्टांत :- a से e तक

धारा 22 दस्तावेजों की अंतर्वस्तु के बारे में मौखिक स्वीकृतियां कब सुसंगत होती हैं-

धारा 22 में कहा गया है किकिसी दस्तावेज की अंतर्वस्तु के बारे में मौखिक स्वीकृति का साक्ष्य भी दिया जा सकता है जब धारा 65 में बताया गया कोई आधार उपस्थित हो।

धारा 22 क.
इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों की अंतर्वस्तु के बारे में मौखिक स्वीकृतियां तब सुसंगत नहीं होती यदि पेश की गई इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख की असलियत प्रश्नगत नहीं है।

स्वीकृतियां जो प्रकट नहीं की जाएंगी:-
धारा 23 सिविल मामलों में कोई भी स्वीकृति सुसंगत नहीं है यह वह या तो इस अभिव्यक्त शर्त पर की गई हो कि उसका साक्ष्य नहीं दिया जाएगा या ऐसी परिस्थितियों के अधीन की गई हो जिनसे न्यायालय यह अनुमान कर सके की पक्षकार इस बात पर परस्पर सहमत हो गए थे कि उनका साक्ष्य नहीं दिया जाना चाहिए।

स्पष्टीकरण:
इस धारा की कोई बात किसी वेरिस्टर प्लीडर अटार्नी या वकील को किसी ऐसी बात का साक्षी देने से छूट देने वाली नहीं मानी जाएगी जिसका साक्ष्य देने के लिए धारा 126 के अधीन उसे विवश किया जा सकता है।

स्वीकृति का प्रभाव

धारा 31 स्वीकृतियां स्वीकृत विषयों का निश्चायक सबूत नहीं है किंतु एतस्मिनपश्चात अंतर्विष्ट उपबन्धो के अधीन विबंध के रूप में परिवर्तित हो सकेंगी।

स्वीकृति तथा संस्वीकृति में अंतर:-

स्वीकृति तथा संस्वीकृति में निम्नलिखित अंतर है-

1-प्रत्येक संस्वीकृति, स्वीकृति भी होती है परंतु प्रत्येक स्वीकृति संस्वीकृति नहीं होती है।

2-संस्वीकृति अपराध के लिए दोषी होने की स्वीकृति है और इसलिए सदैव ही अभियुक्त के हित के विरुद्ध होती है।जब की स्वीकृति शब्द में ऐसे कथन भी सम्मिलित होते हैं जो स्वीकृति करता के पक्ष में होते हैं और इसलिए धारा 21 कुछ परिस्थितियों में कथन करता को अपने ही कठिन साबित करने की अनुज्ञा देती है

3-संस्वीकृत के संबंध में विधि इस बात पर निश्चित है कि संस्वीकृति स्वतंत्र तथा स्वैच्छिक होनी चाहिए जिसके बारे में साक्ष्य अधिनियम में समुचित व्यवस्था की गई है। जब की स्वीकृति किसी भी व्यक्ति से की जा सकती है चाहे वह पुलिसवाला हो प्राधिकार वान व्यक्ति या उत्प्रेरण वचन आदि से प्राप्त की गई हो

4-गुप्त रखने के वचन पर की गई स्वीकृति सुसंगत नहीं होती है जबकि धारा 29 के फल स्वरुप गुप्त रखने के वचन पर अभी प्राप्त संस्वीकृति सुसंगत होती है।

5-धारा 30 के अंतर्गत किसी से अभियुक्त द्वारा अपने तथा अन्य को फसाने वाली की गई स्वीकृति सभी के विरुद्ध सुसंगत होती है जबकि स्वीकृति सहवादी या सहप्रतिवादी के कथन के विरुद्ध साक्ष्य में ग्रहा नहीं होती है।

6-संस्वीकृति ऐसे व्यक्ति द्वारा हो सकती है जिसने या तो कोई अपराध किया है या जिसके विरुद्ध अपराध का आरोप है जबकि स्वीकृत के मामले में धारा 18 19 तथा 20 के अंतर्गत कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं जो मामले के पक्षकार तो नहीं है परंतु उनके कथन पक्षकारों के विरुद्ध सुसंगत होते हैं।

7-स्वीकृति, स्वीकृत तथ्यों का निश्चयात्मक सबूत नहीं होती है परंतु विबन्ध का प्रभाव रखती है जबकि संस्वीकृति के मूल्य के बारे में अधिनियम में कोई भी उपबंध नहीं है परंतु यदि न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि स्वीकृत स्वतंत्र तथा स्वैच्छिक है तो अभियुक्त के दोषी होने का विश्वसनीय साक्ष्य मानते हैं।

Confession

Meaning and definition:-

- The expression confession means a statement made by an accused admitting his guilt. It is an admission or acknowledgement as to commission of an offence.
  If a person accused of an offence makes a statement against himself it is called confession or confessional statement.

संस्कृति शब्द की साक्ष्य अधिनियम में कहीं भी परिभाषा नहीं दी गई है संस्कृति से संबंधित जितने भी उपबंध हैं वह स्वीकृति शीर्षक के अंतर्गत दिए गए हैंधारा 17 में दी गई स्वीकृति की परिभाषा संस्कृति पर भी लागू होती है धारा 17 में स्वीकृति को ऐसा कथन बताया गया है जो कि किसी विवाद यक तथ्य सुसंगत तथ्य के बारे में कोई अनुमान इंगित करता है यदि ऐसी स्वीकृति सिविल कार्यवाही नहीं की जाती है तो वह स्वीकृति कहलाती है और जब ऐसे व्यक्ति द्वारा की जाए जिस पर अपराध का आरोप हो तो इसे संस्वीकृति कहते हैं।

अर्थात साक्ष्य अधिनियम के उपबन्धो के अनुसार जो परिभाषा संस्वीकृति की निकलती है वह यह है किसन संस्वीकृति ऐसीस्वीकृति को कहते हैं जो किसी ऐसे व्यक्ति ने की है जिस पर किसी अपराध का आरोप है और जो किसी विवाधक या सुसंगत तथ्य के बारे मेंकोई अनुमान इंगित करती है जो अनुमान उसका कथन इंगित करें वह कम से कम यह होना चाहिए कि उसने अपराध किया है।

पकला नारायण स्वामी बनाम एंपरर् (प्रिवी काउंसिल) के बाद में लॉर्ड एटकिन ने कहा कि

संस्वीकृति ऐसी होनी चाहिए जिससे या तो अपराध को दोष पूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया गया हो और या कम से कम अपराध से संबंधित करीब करीब सभी तथ्य स्वीकार कर लिए गए हो किसी एक ऐसे तथ्य को स्वीकार करना जो गंभीर रूप से और चाहे निश्चय आत्मक रूप से अपराध में फांसने वाला हो वह इतने से ही संस्वीकृति नहीं हो जाता।

प्रिवी कौंसिल द्वारा दी गई परिभाषा को भारतीय उच्चतम न्यायालय ने स्वीकार कर लिया है पलविंदर कौर बनाम स्टेट ऑफ़ पंजाब के बाद में उच्चतम न्यायालय ने प्रिवी काउंसिल के निर्णय का अनुसरण किया और कहा कि संस्वीकृति की परिभाषा यह है कि इससे या तो अपराध के दोषों को स्पष्ट रूप से मान लिया गया हो या लगभग ऐसे तथ्य स्वीकार कर लिए गए हो जो उस अपराध को गठित करते हैं दूसरे यह कि ऐसा मिश्रित कथन जो चाहे कुछ सीमा तक संस्वीकृत तो है परंतु ऐसा है कि अंत में वह अभियुक्त को बरी करवा देगा संस्वीकृत नहीं कहा जा सकता।

Form of confession संस्कृति का प्रारूप:-

संस्वीकृत दो प्रकार से की जाती है-

1-न्यायिक संस्वीकृति-

जो संस्वीकृति न्यायालय के समक्ष की जाती है वह न्यायिक संस्वीकृति कही जाती है।

2-न्यायिक-वाह्म संस्वीकृति-

जो संस्वीकृति न्यायालय के बाहर की गई है उसे न्यायिक वाह्म संस्वीकृति कहा जाता है ऐसी संस्कृति किसी व्यक्ति से या स्वयं के साथ बातचीत से भी पैदा हो सकती है और यदि कोई इसे सुन ले तो इसका साक्ष दे सकता है।

साहू बनाम स्टेट ऑफ यू पी के बाद में अभियुक्त पर आरोप था कि उसने अपनी बहू की हत्या की थी वह उसके साथ सदैव ही लड़ा करता था हत्या के दिन घर से निकलते समय वह बड़बड़ा रहा था और उसे कहते सुना गया कि मैंने उसे मिटा दिया और उसके साथ ही रोज के झगड़े।
यह कथन संस्वीकृत माना गया और इसका साक्ष्य स्वीकार किया गया क्योंकि संस्वीकृत के सुसंगत होने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि इसे किसी अन्य व्यक्ति के प्रति किया जाए।

section 24 confession caused by inducement threat or promise when irrelevant in criminal proceeding उत्प्रेरणा धमकी या बचन द्वारा कराई गई संस्वीकृति दांडी कार्रवाई में कब विसंगत होती है।:-

धारा 24 में बताया गया है कि कोई भी सन स्वीकृत यदि निम्नलिखित शर्तों के अधीन दी गई है तो वह व्यर्थ होगी और वह सुसंगत नहीं होगी
1-संस्वीकृति उत्प्रेरण धमकी या वचन द्वारा प्राप्त की गई हो
2-ऐसी धमकी आदि प्राधिकार वान व्यक्ति की ओर से दी गई हो
3-यह उसके विरुद्ध आरोप के बारे में हो
4-उसे यह प्रतीत हो कि सन स्वीकृत से उसे ऐहिक रूप का फायदा होगा या किसी बुराई का परिवर्जन होगा।

अर्थात यदि कोई संस्वीकृति उत्प्रेरण आ धमकी या बचन के द्वारा दी गई है और किसी प्राधिकारवान व्यक्ति द्वारा दी गई हैऔर ऐसी धमकी आदि उस आरोप के बारे में दी गई है तथा उससे ऐहिक रूप का फायदा(benefit of temporal nature) होगा तो वह साक्ष्य में सुसंगत नहीं होगी।

पुलिस के प्रति संस्वीकृति

Section 25 confession to police officer not 2 be proved पुलिस ऑफिसर से की गई संस्वीकृति का साबित न किया जाना:-

किसी पुलिस ऑफिसर से की गई कोई भी संस्वीकृत किसी अपराध के अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध साबित ना की जाएगी।

यदि पुलिस के समक्ष की गई संस्वीकृति साबित करने दी जाती तो पुलिस अभियुक्त को मारपीट कर कहलवा लेती कि वह दोषी है और कोई भी व्यक्ति पुलिस की थर्ड डिग्री टॉर्चर से बचने के लिए ऐसा अपराध स्वीकृत कर लेता परंतु ऐसी संस्वीकृति को स्वैच्छिक नहीं माना जाता है अर्थात अभियुक्त न्यायालय के समक्ष यह कथन कर सकता है कि पुलिस ने मारपीट कर जबरन ऐसा अपराध मुझसे स्वीकार करवाया है। क्योंकि धारा 25 के अंतर्गत पुलिस ऑफिसर के समक्ष की गई संस्वीकृति को साक्ष्य में ग्राह्म नहीं माना गया है।

परंतु यह नियम केवल ऐसे कथनों पर लागू होता है जिन्हें सही अर्थ में संस्वीकृति कहा जा सके अगर कथन संस्वीकृत नहीं है अर्थात अपराध के तथ्य या वे सभी तथ्य जिन से अपराध गठित होता है को स्वीकार नहीं करता तो कथन साबित किया जा सकता है चाहे वह पुलिस ऑफिसर से किया गया हो।

दगडू बनाम स्टेट ऑफ महाराष्ट्र के बाद में आधारित किया गया की पुलिस की उपस्थिति का यह प्रभाव नहीं होना चाहिए जब कोई संस्वीकृत किसी के समक्ष की जा रही हो और कोई पुलिस ऑफिसर् संभवत ही वहां खड़ा हो और सुन ले तो इससे संस्वीकृति की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं आता।

पुलिस की अभिरक्षा में संस्वीकृति

Section 26 confession by accused while in custody of police not to be proved against him (पुलिस की अभिरक्षा में होते हुए अभियुक्त द्वारा की गई संस्वीकृति का उसके विरुद्ध साबित ना किया जाना):-

कोई भी संस्वीकृतिजो किसी व्यक्ति ने उस समय की है जब वह पुलिस ऑफिसर की अभिरक्षा में हो ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध साबित ना की जाएगी जब तक कि वह मजिस्ट्रेट की साक्षात उपस्थिति में ना की गई हो।

मजिस्ट्रेट की साक्षात उपस्थिति का तात्पर्य है मजिस्ट्रेट का उसी समय उसी कमरे में होना जिस समय और जिस कमरे में अभियुक्त ने संस्वीकृत की है।

State of UP v/s. Singhara Singh 1964 SC

के बाद में अवधारित किया गया कि मजिस्ट्रेट की साक्षात उपस्थिति में की गई संस्वीकृति तभी ग्राहा होती है जब वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 में वर्णित ढंग से प्राप्त की गई हो।

इस धारा का प्रभाव यह है कि केवल पुलिस के प्रति संस्वीकृत ही नहीं बल्कि पुलिस की अभिरक्षा में किसी भी व्यक्ति के प्रति की गई संस्वीकृत भी साक्ष्य से अलग रखी जाती है अर्थात पुलिस अभिरक्षा के दौरान की गई संस्वीकृति चाहे किसी भी व्यक्ति के प्रति की गई हो साबित नहीं की जा सकती यह धारा तब लागू होती है जब पुलिस की अभिरक्षा में जो व्यक्ति है वह किसी अन्य व्यक्ति से बात करते समय संस्वीकृत करता है। यह धारा भी उसी दर पर आधारित है अर्थात की पुलिस अत्याचार द्वारा उसे मजबूर करेंगे कि वह उन्हें ना बता कर किसी अन्य व्यक्ति को ही हकीकत बता दे पुलिस ऑफिसर के प्रति की गई संस्वीकृति तथा पुलिस अभिरक्षा में किसी अन्य व्यक्ति के प्रति संस्वीकृति के गुण तथा श्रेणी में कोई अंतर नहीं होता है दोनों में स्वतंत्र तथा स्वैच्छिक ना होने का लक्षण हो सकता है।

धारा 26 एक अपवाद स्वीकार करती है कि पुलिस अभिरक्षा में स्वीकृति के समय यदि मजिस्ट्रेट की साक्षात उपस्थिति हो तो स्वीकृति वैध हो जाएगी मजिस्ट्रेट की उपस्थिति इस बात का विश्वास पैदा करती है कि अभियुक्त मारा-पीटा नहीं गया है और इसलिए कहा जा सकता है कि संस्वीकृति स्वैच्छिक तथा विश्वास योग्य है मजिस्ट्रेट की साक्षात उपस्थिति का अर्थ होता है उसका उसी कमरे में होना जहां की संस्वीकृति हो रही है।

पुलिस को संस्वीकृति तथा तथ्यों का पता-
धारा 27 अभियुक्त को प्राप्त जानकारी में से कितनी साबित की जा सकेगी:-

साक्ष्य अधिनियम दो ऐसी परिस्थितियां बताता है जिनमें पुलिस के प्रति स्वीकृत भी सुसंगत होती है एक यह है कि जब कथन किसी मजिस्ट्रेट की साक्षात उपस्थित ने किया गया हो जैसा की धारा 26 में बताया गया है दूसरी यह है कि कथन के फल स्वरुप अपराध से संबंधित कुछ तथ्यों का पता चला हो तथ्यों का पता चलने से यह विश्वास पैदा होता है कि कथन सत्य था चाहे जबरदस्ती लिया गया हो यह दूसरा अपराध धारा 27 में बताया गया है

धारा 27 के अनुसार जब किसी तथ्य के बारे में यह अभिसाक्ष्य दिया जाता है कि किसी अपराध के अभियुक्त व्यक्ति से जो पुलिस ऑफिसर की अभिरक्षा में हो प्राप्त जानकारी के फलस्वरूप उसका पता चल रहा है तथा ऐसी जानकारी में से उतनी चाहे

संस्वीकृत की कोटि में आती हो या नहीं जितनी एतद्द्वारा पता चले हुए तथ्य से स्पष्टतया संबंधित है साबित की जा सकेगी।

धारा 27 धारा 26 के परंतुक की भांति है किंतु वह एक ही प्रकृति के साक्ष्य के बारे में नहीं है धारा 26 पूर्ण रूप से पुलिस के प्रति संस्वीकृति पर प्रतिबंध लगाती है परंतु धारा 27 ऐसे कथन को ग्राहा करती है जो बहुत ही विशेष महत्त्व के तत्व की खोज करता है चाहे वह संस्वीकृति हो चाहे ना हो धारा 26 के अधीन मजिस्ट्रेट की उपस्थिति में की गई संस्वीकृति पूर्ण रूप से साबित की जा सकती है जबकि धारा 27 कथन के केवल उतने भाग को ग्राहा करती है जिससे किसी तथ्य की जानकारी मिलती है।

Pulukuri kottaya v/s. Emperor 1947 PC
के मामले में यह आवधारित किया गया की धारा 27 का केवल वही भाग साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है जो प्राप्त वस्तु से सीधे संबंधित है।

State of UP versus devman Upadhyay 1960 एस सी
के बाद में धारा 27 की संवैधानिक वैधता पर बहस हुई उच्चतम न्यायालय ने धारा 27 को संविधान के प्रतिकूल नहीं माना और इसलिए देवमन की सजा फिर से कायम कर दी उच्चतम न्यायालय ने कहा कि अभियुक्त के कथन का वह भाग जिसमें उसने कहा "सुखदेयी को मारा था" यह संगत नहीं था इसे काट देना चाहिए बाकी भाग सुसंगत था और उतना ही उसके दोषी होने का पर्याप्त साक्ष्य था।

धारा 28 उत्प्रेरणा धमकी या वचन से पैदा वे मन पर प्रभाव के दूर हो जाने के पश्चात की गई संस्वीकृति सुसंगत है:-

धारा 28 धारा 24 का अपवाद है अर्थात धारा 24 के अंतर्गत उत्प्रेरण धमकी या वचन के अधीन प्राप्त स्वीकृति कब सुसंगत हो जाएगी इसके बारे में धारा 28 प्रावधान करती है। धारा 28 के अनुसार यदि ऐसी कोई स्वीकृति जैसी धारा 24 में निर्दिष्ट है न्यायालय की राय में उसके मन पर प्रभाव के जो ऐसी किसी उत्प्रेरणा धमकी या वचन से कारित हुआ है पूर्णता दूर हो जाने के पश्चात की गई है तो वह सुसंगत है।

गुप्त रखने के वचन से प्राप्त संस्वीकृति-
धारा 29 अन्यथा सुसंगत स्वीकृति को गुप्त रखने के वचन आदि के कारण विसंगत ना हो जाना:-

धारा 29 यह निर्धारित करती है की यदि कोई संस्वीकृति सुसंगत हो अर्थात यदि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की अन्य किसी धारा द्वारा साबित किए जाने से अपवर्जित न की गई हो तो वह असंगत नहीं हो सकती यदि वह निम्नलिखित प्रकार से कारित की गई हो-

1-गुप्त रखने के वचन पर
2-कपट द्वारा
3-नशे की हालत में
4-प्रश्नों के उत्तर में
5-चेतावनी की कमी से

स्टेट ऑफ यूपी बनाम सिंघाड़ा सिंह के बाद में उच्चतम न्यायालय ने यह माना कि यदि कोई स्वीकृति किसी मजिस्ट्रेट द्वारा उस प्रकार से ही दर्ज नहीं की जाती है जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 में उल्लेख है तो वह ग्राहा नहीं होगी इसलिए यह कहा जा सकता है कि सही दृष्टिकोण यह है कि धारा 29 न्यायकेतर संस्वीकृतियों में लागू होती है।

अतः स्पष्ट है कि धारा 29 तभी लागू होगी जब संस्वीकृति धारा 24 26 और 28 के अंतर्गत वैध हो और इन तीनों धाराओं की समस्त औपचारिकताओं को पूरा करती हो।

Dying declaration(मृत्यु कालिक कथन):-

मृत्युकालिक कथन से तात्पर्य ऐसे कथन से है जो ऐसे व्यक्ति द्वारा सुसंगत तथ्यों का लिखित या मौखिक कथन हो जिसकी मृत्यु हो गई है।
भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 60 में उपबन्ध किया गया है की मौखिक साक्ष्य प्रत्यक्ष होना चाहिए अनुश्रुत नहीं परंतु कुछ ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं जब देखने और सुनने वाला व्यक्ति न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हो सकता क्योंकि या तो वह मर गया है या किसी कारण से न्यायालय में उसकी हाजिरी संभव नहीं है तो ऐसी दशा में यदि उस व्यक्ति ने जो कुछ उसके निजी ज्ञान में उसे किसी अन्य व्यक्ति को बताया था तो वह अन्य व्यक्ति न्यायालय में साक्ष्य दे सकता है कि अमुक व्यक्ति ने उससे यह कहा था।

अतः धारा 32 में ऐसी परिस्थितियों का वर्णन किया गया है जबकि अनुश्रुत साक्ष्य ग्राहा होता है।

अतः धारा 32 उन धाराओं में से है जो अनुश्रुत साक्ष्य को अलग रखने के सिद्धांत के अपवाद बताती है।

धारा 32 :- वे दशाएं

जिनमें उस व्यक्ति द्वारा सुसंगत तथ्य का किया गया कथन सुसंगत है जो मर गया है या मिल नहीं सकता इत्यादि-

सुसंगत तथ्यों के लिखित या मौखिक कथन जो ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए थे जो मर गया है या मिल नहीं सकता है या जो साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो गया है या जिसकी हाजिरी इतने विलंब या व्यय के बिना बात नहीं की जा सकती जितना मामले की परिस्थितियों में न्यायालय को आयुक्त युक्त प्रतीत होता है निम्नलिखित दशाओं में स्वमेव सुसंगत है-

अर्थात भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अंतर्गत निम्नलिखित व्यक्तियों के कथन चाहे वह मौखिक हो अथवा लिखित सुसंगत माने जाते हैं-

1-जो मर गया है या

2-जो मिल नहीं सकता है या

3-जो साक्ष्य देने के लिए असमर्थ है या

4-जिसकी हाजिरी बिना आयुक्ति युक्त विलंब या व्यय के नहीं की जा सकती जितना मामले की परिस्थितियों में न्यायालय को आयुक्तियुक्त प्रतीत होता है

ऐसे कथन निम्नलिखित दशाओं में में ग्राहा होते हैं-

1-जबकि वे मृत्यु के कारण से संबंधित है

2-अथवा कारोबार के अनुक्रम में किया गया है

3-अथवा करने वाले के हित के विरुद्ध है

4-अथवा लोक अधिकार यार उनके बारे में यह साधारण हित के विषयों के बारे में कोई राय देता है

5-अथवा नातेदारी के अस्तित्व से संबंधित है

6-अथवा कौटुंबिक बातों से संबंधित विल या विलेख में किया गया है

7-अथवा धारा 13 खंड (क) में वर्णित संव्यवहार से संबंधित दस्तावेज में किया गया है

8-अथवा कई व्यक्तियों द्वारा किया गया है और प्रश्नगत बात से सुसंगत भावनाएं अभिव्यक्त करता है

दृष्टांत-- (a से n तक)

धारा 32 का खंड (1) उपबंध करता है कि जब किसी मामले में किसी व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो जाता है तो मृत व्यक्ति का कथन जिसे उसने अपनी मृत्यु के कारण के

विषय में या जिन परिस्थितियों के फल स्वरुप उसकी मृत्यु हुई है उसके विषय में किया है सुसंगत एवं ग्राहा होगा।

धारा 32 (1)-

जबकि वह कथन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस समय व्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है जिसके फल स्वरूप उसकी मृत्यु हुई तब उन मामलों में जिनमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्न गत हो,

ऐसे कथन सुसंगत है चाहे उस व्यक्ति को जिसने उन्हें किया है उस समय जब हुए किए गए थे मृत्यु की प्रत्याशा थी या नहीं और चाहे उस कार्यवाही की जिसमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्न गत होता है प्रकृति कैसी ही क्यों ना हो

अतः धारा 32 के अंतर्गत मृत्यु के समय कहे गए कथन तभी सुसंगत होते हैं जबकि मृतक ने अपना कथन
1-अपनी मृत्यु के कारण के संबंध में किया हो
2-उन परिस्थितियों के विषय में किया हो जिन से उसकी मृत्यु हुई हो
3-उसकी मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो

मृत्यु की प्रत्याशंका आवश्यक नहीं:-

इंग्लिश विधि की भांति कई बारीकी तथा तकनीकी मुद्दे धारा 32(1) में नहीं लाए गए हैं जिस बात पर महत्वपूर्ण रूप से यह उप धारा इंग्लिश विधि से अलग है वह यह है कि यह आवश्यक नहीं कि कथन करता मौत की आशा से घिर चुका हो अगर कथन करता वास्तव में मर गया है और उसका कथन मृत्यु की परिस्थितियों पर प्रकाश डालता है तो यह सुसंगत होगा चाहे उस समय मृत्यु होने का कारण भी ना पैदा हुआ हो।

इसका सांविधिक प्रमाण धारा 32 (1) स्वयं है और न्यायिक प्रमाण प्रिवी काउंसिल द्वारा निर्णीत वाद पाकला नारायण स्वामी बनाम एंपरर
है।

लॉर्ड एटकिन ने कहा कि धारा 32(1) में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ में ऐसे कोई प्रतिबंध नहीं मिलते हैं की कथन घटना होने के बाद का होना चाहिए या कथन करता मौत के आस-पास हो और यह की मृत्यु की परिस्थिति में केवल मृत्यु के स्थान एवं समय पर किए गए कार्य हों

धारा 32(1) के अंतर्गत कथन ऐसे समय भी किया जा सकता है जब मृत्यु का कोई कारण ना पैदा हुआ हो और चाहे मृतक को यह आशंका भी ना हो कि वह मार दिया जाएगा।

शारदा वर्दीचंद शारदा बनाम स्टेट ऑफ महाराष्ट्र
के बाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि कथन का संबंध आवश्यक रूप से मृत्यु के कारण एवं मृत्यु पैदा करने वाले समव्यवहार की परिस्थितियों से होना चाहिए।

इशारों द्वारा मृत्यु कालिक कथन:-

क्वीन एंप्रेस बनाम अब्दुल्लाह के बाद में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने इशारे द्वारा किए गए कथन को भी मृत्यु कालिक कथन के रूप में स्वीकार किया।

मृत्यु कालीन कथन का साक्ष्यिक मूल्य :-

मृत्यु कालीन कथन यद्यपि कमजोर साक्ष्य होता है लेकिन ऐसा कोई निरपेक्ष नियम नहीं है ।यदि न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि मृत्युकालीन कथन स्वतंत्र तथा स्वैच्छिक है तो केवल उसी के आधार पर दोष सिद्ध की जा सकती है आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक दशा में उसका संपुष्टि करण हो। अर्थात यदि मृत्यु कालीन कथन भरोसेमंद पाया जाता है तो दोष सिद्ध केवल इसी के आधार पर हो सकती है।

मृत्यु कालीन कथन के संबंध में उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित सिद्धांत स्थापित किए हैं-

1-ऐसा कोई विधि का आत्यंतिक नियम नहीं है कि जब तक संपुष्टि ना हो मृत्यु कालीन कथन दोषसिद्धि का एकमात्र आधार नहीं हो सकता

2-प्रत्येक मामले की जांच उसी के तथ्यों के अनुसार होनी चाहिए

3-मृत्यु कालिक कथन अन्य साक्ष्य के मुकाबले में कमजोर प्रकार का साक्ष्य नहीं होता

4-ऐसा मृत्यु कालीन कथन जिसे किसी मजिस्ट्रेट ने लिखा है प्रश्न उत्तर रूप में तथा मृतक के अपने शब्दों में वह पूर्ण रुप से विश्वसनीय होता है